# शोध दिशा

ISSN 0975-735X

**विश्वस्तरीय शोध-पत्रिका**

**केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा से अनुदान प्राप्त**

**UGC APPROVED CARE LISTED JOURNAL**

**विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा मान्यता प्राप्त शोध पत्रिका**

शोध अंक 62/8 अप्रैल-जून 2023 400.00 रुपए



**संपादकीय कार्यालय**

हिंदी साहित्य निकेतन, 16 साहित्य विहार,
बिजनौर 246701 (उ॰प्र॰)
फोन : 0124-4076565, 09557746346
ई-मेल : shodhdisha@gmail.com
वैब साइट : www.hindisahityaniketan.com

**क्षेत्रीय कार्यालय**

हरियाणा
**डॉ॰ मीना अग्रवाल**
ए-402, पार्क व्यू सिटी-2 सोहना रोड,
गुड़गाँव (हरियाणा)

दिल्ली एन॰सी॰आर॰
**डॉ॰ अनुभूति**
सी-106, शिवकला अपार्टमेंट्स
बी 9/11, सेक्टर 62, नोएडा
फोन : 09958070700

(सभी पद मानद एवं अवैतनिक हैं।)

**संपादक**
डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल
07838090732

**प्रबंध संपादक**
डॉ॰ मीना अग्रवाल

**संयुक्त संपादक**
डॉ॰ शंकर क्षेम
डॉ॰ प्रमोद सागर

**उपसंपादक**
डॉ॰ अशोककुमार
09557746346
डॉ॰ कनुप्रिया प्रचण्डिया

**कला संपादक**
गीतिका गोयल/ डॉ॰ अनुभूति

**विधि परामर्शदाता**
अनिलकुमार जैन, एडवोकेट

**आर्थिक परामर्शदाता**
ज्योतिकुमार अग्रवाल, सी॰ए॰


**शुल्क**

आजीवन (दस वर्ष): छह हजार रुपए
वार्षिक शुल्क : एक हजार रुपए
यह प्रति : चार सौ रुपए


प्रकाशित सामग्री से संपादकीय सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका से संबंधित सभी विवाद केवल बिजनौर स्थित न्यायालय के अधीन होंगे। शुल्क की राशि 'शोध दिशा' बिजनौर के नाम भेजें। (सन् 1989 से प्रकाशन-क्षेत्र में सक्रिय)



स्वत्वाधिकारी, मुद्रक, प्रकाशक डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल द्वारा श्री लक्ष्मी ऑफसैट प्रिंटर्स, बिजनौर 246701 से मुद्रित एवं 16 साहित्य विहार, बिजनौर (उ॰प्र॰) से प्रकाशित। पंजीयन संख्या : UP HIN 2008/25034

संपादक : डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल

## परामर्श-मंडल

डॉ॰ सुधा ओम ढींगरा, 101, Guymon Court, MorrisVille, NC-27560 USA
डॉ॰ सुरेशचंद्र शुक्ल, अध्यक्ष इंडो-नार्वेजियन सूचना एवं सांस्कृतिक मंच
प्रो॰ हरिमोहन, कुलपति, जे॰एस॰ विश्वविद्यालय, शिकोहाबाद (फिरोजाबाद) उ॰प्र॰
प्रो॰ खेमसिंह डहेरिया, कुलपति, अटलबिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म॰प्र॰) 462038
डॉ॰ कमलकिशोर गोयनका, ए-98, अशोक विहार फेज-1, दिल्ली 110052
प्रो॰ अशोक चक्रधर, जे-116, सरिता विहार, नई दिल्ली
श्री अनिल शर्मा जोशी, उपाध्यक्ष, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा (उ॰प्र॰)
प्रो॰ पूरनचंद टंडन, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
डॉ॰ एस॰के॰ पवार, प्रोफेसर व अध्यक्ष, हिंदी विभाग, कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवाड़ 580003 (कर्नाटक)
प्रो॰ नंदकिशोर पांडेय, हिंदी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज॰)
प्रो॰ आदित्य प्रचंडिया, पूर्व आचार्य हिंदी विभाग, दयालबाग एजुकेशनल इंस्टीट्यूट, दयालबाग, आगरा
प्रो॰ बाबूराम, अध्यक्ष, हिंदी-विभाग, चौ॰ बंशीलाल विश्वविद्यालय, भिवानी (हरियाणा)
डॉ॰ राजेंद्र मिश्र, 14/4 स्नेहलता गंज, इंदौर 452003 (म॰प्र॰)
प्रो॰ हरिमोहन बुधौलिया, पूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष हिंदी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन
प्रो॰ आनंदप्रकाश त्रिपाठी, अध्यक्ष हिंदी अध्ययन मंडल, डॉ॰ हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर
प्रो॰ अर्जुन चव्हाण, प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष हिंदी विभाग, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर (महा॰)
डॉ॰ माया टाक, पूर्व प्रोफ़ेसर संगीत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज॰)
प्रो॰ अनिलकुमार जैन, पूर्व प्रोफ़ेसर हिंदी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज॰)
प्रो॰ डॉ॰ सदानंद भौसले, अध्यक्ष हिंदी विभाग, सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे (महा॰)
प्रो॰ शंभुनाथ तिवारी, हिंदी विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ (उ॰प्र॰)
डॉ॰ योगेंद्रनाथ शर्मा 'अरुण', (पूर्व प्राचार्य) 74/3 नया नेहरूनगर, रुड़की (उत्तराखंड)
डॉ॰ अवनिजेश अवस्थी, हिंदी विभाग, पी॰जी॰ डी॰ए॰वी॰ कालेज, नेहरू नगर, नई दिल्ली
डॉ॰ अरुणकुमार भगत, अध्यक्ष, मीडिया अध्ययन विभाग, महात्मा गांधी केंद्रीय विश्वविद्यालय, मोतीहारी
प्रो॰ मंजुला राणा, अध्यक्ष हिंदी विभाग, हेमवती नंदन बहुगुणा केंद्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर
प्रो॰ हनुमानप्रसाद शुक्ल, हिंदी विभाग, महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा
प्रो॰ चंद्रकांत मिसाल, प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष हिंदी विभाग, एस॰एन॰डी॰टी॰ महिला विद्यापीठ, पुणे (महा॰)
डॉ॰ मुकेश गर्ग, पूर्व एसोसिएट प्रोफ़ेसर हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
प्रो॰ जितेंद्र वत्स, प्रोफ़ेसर हिंदी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया (बिहार)
डॉ॰ माला मिश्रा, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, अदिति कालेज (दिल्ली विश्व॰), बवाना
डॉ॰ दिनेशकुमार चौबे, हिंदी विभाग, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग (मेघालय)
डॉ॰ शहाबुद्दीन शेख़, प्राचार्य, लोकसेवा कला व विज्ञान महा॰, औरंगाबाद (महा॰)
डॉ॰ महेशचंद्र, पूर्व एसोसिएट प्रोफ़ेसर हिंदी विभाग, मेरठ कॉलेज, मेरठ (उ॰प्र॰)
श्री राकेशकुमार दुबे, पत्रकारिता और जनसंचार विभाग, उड़ीसा केंद्रीय विश्वविद्यालय, कोरापुट (उड़ीसा)
डॉ॰ महेश दिवाकर, अध्यक्ष, अंतर्राष्ट्रीय हिंदी साहित्य एवं कला मंच, मुरादाबाद (उ॰प्र॰)
डॉ॰ प्रणव शर्मा, अध्यक्ष हिंदी विभाग, उपाधि महाविद्यालय, पीलीभीत 262001 उ॰प्र॰
डॉ॰ राखी उपाध्याय, प्रोफेसर हिंदी विभाग, डी॰ए॰वी॰ कॉलेज, देहरादून 248001 (उत्तराखंड)

# अनुक्रम


इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में वृद्धावस्था विमर्श/ **डॉ॰ शितल गायकवाड** 20
आदिवासी कविता: अस्तित्व और अस्मिता के प्रश्न/ **डॉ॰ शिव कुमार मंडल** 24
हिंदी गद्य साहित्य में 'कैंपस उपन्यास' : उद्‌भव और विकास/ **सुमित कुमार हलदर** 29
भाषा के विकास में रीतिकालीन संत कवियों के काव्य का महत्त्वपूर्ण योगदान : भारतीय परिप्रेक्ष्य के संदर्भ में/ **सुनील कुमार जलथुरिया, डॉ॰ वीणा छंगाणी** 35
पर्वतीय परिवेश की कहानियों में संवेदना के विविध आयाम/ **आनंद सिंह कप्रवान** 40
भाषाओं में परस्पर अनुवाद : चुनौतियाँ और संभावनाएँ/ **डॉ॰ ओमप्रकाश प्रजापति** 48
सूर काव्य में वियोग वर्णन/ **डॉ॰ केशवदेव शर्मा** 54
उराँव जनजाति का जीवन-चक्र/ **विमल कच्छप** 58
शिक्षा के केंद्र के रूप में मंदिर/ **दुर्गेश नंदिनी** 64
'अनित्य' उपन्यास में नारी अस्मिता का प्रश्न/ **शिवशंकर** 69
कोरोना जैसी महामारियों से लड़ते वक्त चिकित्साकर्मियों के लिए भगवद्‌गीता का संदेश/ **डॉ॰ दिनेशकुमार** 76
डॉ॰ अंबेडकर की स्त्रीदृष्टि और भारत सरकार की वर्तमान सरकारी योजनाएँ/ **डॉ॰ दीपा** 82
कुँवरनारायण के प्रबंधकाव्य 'आत्मजयी' में अस्तित्ववादी चेतना/ **डॉ॰ आर॰के॰ पांडेय, तारकेश्वर** 87
होलीगीतों पर मध्यकालीन कविता का प्रभाव/ **डॉ॰ शंकर मुनि राय** 93
प्रवासी हिंदी साहित्य : नारी-पात्र/ **डॉ॰ पुष्पा गर्ग** 98
अदम गोंडवी की गजलों में सामाजिक सरोकार/ **डॉ॰ प्रभात रंजन, शिरोमणी यादव** 104
समकालीन कहानियों में वृद्धजन संघर्ष/ **डॉ॰ जोयिस टॉम** 109
तेलुगु कवि बोई भीमन्ना के काव्य में चित्रित सामाजिक संवेदना : जल रही झोंपड़ियाँ के संदर्भ में/ **डॉ॰ दोड्डा शेषु बाबु** 114
समकालीन हिंदी कविता : लेखन और चुनौतियाँ/ **डॉ॰ केशवदेव शर्मा** 118
बालविवाह एवं हिंदी साहित्य/ **बृजेश लता, डॉ॰ ज्योति उपाध्याय, डॉ॰ सुभाशीष भद्रा** 123
हिंदी कविता : दलित स्वर के विविध आयाम/ **प्रो॰ प्रमोद कोवप्रत** 130
ढलती साँझ का सूरज : किसान जीवन की एक दारुण कथा/ **सुप्रीति शुक्ला** 134
पंचकोश सिद्धांत की विद्यालयों में उपयोगिता : विज्ञानमय कोश के विशेष संदर्भ में/ **डॉ॰ राजेश्वरी गर्ग** 137
हिंदी साहित्य में सांस्कृतिक संवेदना और मूल्यबोध/ **डॉ॰ हंसराज चौहान** 141

# भाषाओं में परस्पर अनुवाद : चुनौतियाँ और संभावनाएँ

**डॉ॰ ओमप्रकाश प्रजापति**
सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला

मानव के सामाजिक जीवन में विभिन्न प्रयोजनों के संप्रेषण के लिए ही भाषा का विकास हुआ है। भाषा केवल व्यक्तिक संवाद और सामान्य संप्रेषण के लिए ही महत्त्व नहीं रखती वरन् सभ्य सुसंस्कृत दैनिक जीवन के विभिन्न प्रयोजनों को साधने का एक आवश्यक अवयव भी है। सामाजिक और सांस्कृतिक उपयोगधर्मिता के कारण भाषा में विविधताओं का जन्म होता है जिससे जीवन के विभिन्न संदर्भों, स्थितियों और कार्यक्षेत्रों में भाषा के कई रूप उभरने लगते हैं और हिंदी भी इससे अछूती नहीं है। हिंदी भाषा के राष्ट्रीय महत्त्व के समानांतर इसके क्षेत्रीय योगदान में प्रयोगगत कई भेद दिखाई देते हैं। अनुवाद की दृष्टि से आंचलिक मँझोली भाषा और बोलियों से समृद्ध हिंदी के संदर्भ में भाषाई बहुरंग को एक अनिवार्य अनुबंध के रूप में समझना आवश्यक है।

प्रयोजनमूलक हिंदी का अर्थ हुआ–ऐसी विशेष हिंदी जिसका उपयोग किसी विशेष प्रयोजन के लिए ही किया जाए। इसे कामकाजी हिंदी अथवा व्यावहारिक हिंदी भी कहा जाता है। यह अँग्रेजी शब्द 'फंक्शनल हिंदी' का पर्याय है। राजभाषा विभाग के पूर्व सचिव रमाप्रसन्न नायक इसे 'प्रयोजन मूलक के बजाय व्यावहारिक हिंदी कहना उचित समझते हैं'[1] प्रयोजनमूलक शब्द से लगता है कि कहीं ऐसी हिंदी तो नहीं है जिसे निष्प्रयोजनपरक कहा जा सकता है। हिंदी के सुप्रसिद्ध आलोचक डॉ॰ नगेंद्र का मत है, 'वस्तुत: प्रयोजनमूलक हिंदी के विपरीत अगर कोई हिंदी है तो वह निष्प्रयोजनमूलक नहीं वरन् आनंदमूलक हिंदी है। आनंद व्यक्ति सापेक्ष है और प्रयोजन समाज सापेक्ष। आनंद स्वकेंद्रित होता है और प्रयोजन समाज की ओर इशारा करता है। हम आनंदमूलक हिंदी के विरोधी नहीं हैं इसलिए आनंदमूलक साहित्य के हम भी हिमायती हैं। पर सामाजिक आवश्यकताओं के संदर्भ में हम संप्रेषण के बुनियादी आधार को भी अपनी नजर से ओझल नहीं करना चाहते।'[2] हिंदी के विद्वान डॉ॰ ब्रजेश्वर वर्मा ने भी प्रयोजनमूलक विशेषण शब्द को स्वीकारते हुए इसमें निहित संकेत को इन शब्दों में स्पष्टन किया था 'निष्प्रयोजन हिंदी कोई नहीं है, लेकिन प्रयोजनमूलक विशेषण उसके व्यावहारिक पक्ष को अधिक उजागर करने के लिए प्रयुक्त किया गया है।'

प्रयोजनमूलक हिंदी के प्रतिष्ठापक श्रीमोटूरि सत्यनारायण ने भी प्रयोजनमूलक शब्द को अपनाने पर विशेष बल देते हुए इसके कार्यक्षेत्र को स्पष्ट करते हुए कहा था, 'जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति में लाई जाने वाली हिंदी ही प्रयोजनमूलक हिंदी है। भाषा के दो पक्ष या प्रकार्य होते हैं। एक का संबंध हमारी सौंदर्यपरक अनुभूति का आलंबन होता है। यह आत्मकेंद्रित और आत्मसुख का उपकरण होता है। दूसरे का संबंध हमारी सामाजिक आवश्यकता और जीवन की उस व्यवस्था से जुड़ा होता है, जो व्यक्तिपरक होकर भी समाज सापेक्ष होती है और जिसका संबंध मूलत: हमारी जीविका के साथ रहता है और उसके नियमित जो सेवा-माध्यम (सर्विसरूप) के रूप में प्रयुक्त होता है। भाषा

 ISSN 0975-735X

व्यवहार का यह दूसरा पक्ष ही भाषा का प्रयोजनमूलक संदर्भ है। अत: प्रयोजनमूलक हिंदी का तात्पर्य हिंदी के उन विविध रूपों से है जो सेवा माध्यम के रूप में सामने आता है।'[3]

प्रयोजनमूलक हिंदी का मुख्य लक्ष्य है जीविकोपार्जन के विविध क्षेत्रों में प्रयुक्त होनेवाले भाषा रूपों को प्रस्तुत करना। हिंदी केवल सामान्य बोलचाल तथा साहित्य तक ही सीमित न रहकर प्रशासन न्याय, पत्रकारिता, वाणिज्य, बैंक, विज्ञापन आदि विभिन्न क्षेत्रों में भी प्रयुक्तर हो रही है। ये क्षेत्र भी सामान्य भाषा–व्यवहार के क्षेत्र नहीं हैं, वरन् औपचारिक भाषा प्रयोग के क्षेत्र हैं, जिनके लिए हिंदी में उन क्षेत्रों के भाषा रूप को विकसित करने की आवश्यकता का अनुभव किया गया। इस प्रकार विभिन्न व्यवसायों से संबंधित व्यक्तियों जैसे–व्यापारी, पत्रकार, डॉक्टर, वकील, प्रशासक, वैज्ञानिक आदि के कार्यक्षेत्रों में प्रयुक्त विशिष्ट हिंदी का भाषा रूप ही 'प्रयोजनमूलक हिंदी' कहलाता है। प्रयोजनमूलक हिंदी की संकल्पना में प्रयुक्ति के स्तर, विषयवस्तु, संदर्भ के अनुरूप पारिभाषिक शब्दावली तथा विशिष्ट भाषिक संरचना और शैली समाहित है। इस प्रकार प्रयोजनमूलक हिंदी के उस प्रयुक्तिपरक विशिष्ट रूप से है जिसे विषयगत, भूमिकागत तथा संदर्भगत प्रयोजनों के लिए विशिष्ट भाषिक संरचना में प्रयुक्त किया जाता है, जो प्रशासन, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के अनेक विधि क्षेत्रों के कथ्य को अभिव्यंजित करने में सक्षम है। भाषिक भूमंडलीकरण के युग में हिंदी के इस प्रयोजनपरक स्वरूप के महत्त्व में वृद्धि हो रही है, और इसी संदर्भ में इसके अध्ययन की नितांत आवश्यकता है।

आधुनिककाल में हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं से अनुवाद की परंपरा ईस्ट इंडिया कंपनी के शासनकाल तथा अँग्रेजी शिक्षा के प्रचार–प्रसार से प्रारंभ होती है। वैसे तो अँग्रेजी से वैज्ञानिक, धार्मिक एवं शैक्षिक साहित्य के भी अनेक अनुवाद हुए हैं किंतु अधिकतर अनुवाद सर्जनात्मक साहित्य के ही हुए हैं। वड्र्सवर्थ, कीट्स, शैली, बायरन, टामस ग्रे, गोल्डस्मिथ, काउपर आदि की कविताओं के अनेक अनुवाद मिलते हैं। ईरान में ग्यारहवीं–बारहवीं शताब्दी का एक फारसी कवि उमर खैयाम कई शताब्दियों तक गुमनामी के अंधकार में खोया रहा और फिर अचानक उन्नीसवीं शताब्दी में अनुवाद के माध्यम से विश्व प्रसिद्ध हो गया। उसकी फारसी में रचित रूबाइयों का अँग्रेजी में सर्वप्रथम अनुवाद सन् 1859 में फिट्जजेराल्ड ने किया। फिट्जजेराल्ड में मौलिक रचनाकार की प्रतिभा थी और इसी कारण उमर खैयाम की रूबाइयों का अनुवाद पुनर्सृजन अधिक था, अनुवाद कम। फिर इसके बाद इन रूबाइयों के अनुवाद विश्व की अनेक भाषाओं में हुए। हिंदी में भी फिट्जजेराल्ड के अधिकतर अनुवाद 1930–40 के दौरान हुए। सन् 1930 और उसके बाद हरिवंशराय बच्चन, मैथिलीशरण गुप्त, सुमित्रानंदन पंत, केशव, प्रसाद, रघुवंशलाल गुप्त, ब्रजमोहन तिवारी, जगदंबाप्रसाद हितैषी, सूर्यनाथ टकसर, बलदेवप्रसाद मिश्र, किशोरी रमण टंडन, कमला देवी साहित्यकारों और अनुवादकों ने किया है।

खड़ीबोली हिंदी का उद्भव और विकास भारतीय नवजागरण के उदय के साथ हुआ। यदि नवजागरण 'दो जातीय संस्कृतियों की टकराहट से उत्पन्न रचनात्मक ऊर्जा है'[4] तो अनुवाद ही वह माध्यम है जो संस्कृतियों में संपर्क और टकराहट लाने में अपनी भूमिका निभाता है। वास्तव में नवजागरण की चेतना के पीछे अनुवाद की प्राय: मुख्य भूमिका रहती है। वस्तुत: 'अनुवाद की गहरी परतों से नवजागरण की भूमि उर्वर होती है।'[5] भारतीय नवजागरण में संस्कृत और अँग्रेजी से हुए अनुवादों की वही भूमिका थी जो यूरोपीय पुनर्जागरण के परिप्रेक्ष्य में ग्रीक तथा लैटिन के अनुवादों की थी। भारतीय नवजागरण में संस्कृत और अँग्रेजी के अनुवादों की भूमिका एक समान रही है। इसमें भारतेंदु ने संस्कृत, प्राकृत, अँग्रेजी से कई नाटकों और ग्रंथों का हिंदी अनुवाद किया। भारतेंदुयुग में

लाला सीताराम ने 1885 से 1915 के बीच शेक्सपियर के ग्यारह नाटकों का अनुवाद किया और साथ ही भवभूति, कालिदास, शूद्रक आदि के काव्यों का भी अनुवाद किया। गोल्डस्मिथ, थॉमस ग्रे, 'लांगफेलो' एवं 'पार्नेल' के प्रसिद्ध अनुवादक श्रीधर पाठक कालिदास के 'ऋतुसंहार' के भी अनुवादक हैं। जोसेफ एडिसन के 'केटो' के सुप्रसिद्ध अनुवादक तोताराम वर्मा (1847-1909) ने 'वाल्मीकि रामायण' का भी अनुवाद किया। महावीरप्रसाद द्विवेदी (1864-1938) जयदेव की 'बिहारवाटिका' (1891) के अनुवादक होने के साथ-साथ अन्य कई ग्रंथों का अनुवाद किया। गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित महाकाव्य 'रामचरितमानस' (1574) का अनुवाद लगभग सभी भारतीय भाषाओं में ही नहीं हुआ, वरन् अँग्रेजी, रूसी, फ्रांसीसी, चीनी आदि अनेक विदेशी भाषाओं में भी हुआ है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि संस्कृत के एक विद्वान रामू द्विवेदी ने सन् 1605 के आस-पास 'प्रेम रामायण' नाम से विश्वविख्यात महाकाव्य का अनुवाद संस्कृत में किया था जिसकी हस्तलिखित प्रति लंदन में रॉयल 'एशियाटिक सोसायटी ऑफ इंडिया' के ग्रंथालय में उपलब्ध है।

हिंदी भाषा और साहित्य न केवल संस्कृत से समृद्ध हुआ, वरन् अँग्रेजी कृतियों के अनुवाद से भी हुआ। इस तथ्य से नवजागरण के साहित्यकार अवगत थे। महावीरप्रसाद द्विवेदी के मतानुसार, 'जैसे अँग्रेजों ने ग्रीक और लैटिन भाषा की सहायता से अँग्रेजी की उन्नति की और उन भाषाओं के उत्तमोत्तम ग्रंथों का अनुवाद करके अपने साहित्य की शोभा बढ़ाई, इस समय अँग्रेजों का साहित्य अत्यंत उन्नत देशों को प्राप्त है। अतएव हमको चाहिए कि उस भाषा के अच्छे-अच्छे ग्रंथों का अनुवाद करके हिंदी साहित्य की दशा को सुधारें।'[6] अँग्रेजी साहित्य के संपर्क में आने पर भारतीय साहित्यकारों ने अँग्रेजी नाटकों के अनुवाद भी आरंभ कर दिए। सर्वप्रथम आगा खाँ ने शेक्सपियर के 'मर्चेंट ऑफ वेनिस' को अनुवाद 'दिलफरोश' नाम से किया। उमराव अली लखनवी ने 'हेमलेट' को 'जहाँगीर' नाम से तथा अहमद हुसैन खान ने 'ऑथेलो' को 'जाकर' नाम से अनूदित किया।

वस्तुतः आधुनिक भारतीय भाषाओं में संस्कृत के प्रमुख ग्रंथों के अनुवादों के साथ-साथ अरबी, फारसी, अँग्रेजी आदि भाषाओं के विश्वा प्रसिद्ध ग्रंथों के अनुवाद हो चुके हैं। इसके साथ-साथ हिंदी, बंगला, मराठी आदि अनेक भारतीय भाषाओं की अनेक कृतियों के अनुवाद भी विश्वध की प्रमुख भाषाओं में हुए हैं और हो भी रहे हैं। बाद में आधुनिक भारत की भाषाओं के परस्पर अनुवाद में काफी तेजी आई है, विशेषकर, बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारतीय भाषाओं के बीच जितना अनुवाद कार्य हुआ है, उतना उससे पहले के सैकड़ों सालों में भी नहीं हुआ। वास्तव में प्रत्येक अंचल में एक-दो भाषाओं का प्रभाव उस अंचल की अन्य भाषाओं पर अधिक प्रभाव पड़ा है। पूर्वांचल में संस्कृत साहित्य का प्रभाव बंगला, उड़िया, असमिया आदि पर अधिक प्रभाव पड़ा और इन भाषाओं के बीच सर्वाधिक अनुवाद बंगला भाषा से हुए। उत्तर-मध्य अंचल में हिंदी का प्रभाव सर्वाधिक रहा। दक्षिण में तमिल-मलयालम के बीच अधिक अनुवाद हुए और दूसरी ओर कन्नड़-तेलुगू के बीच भी अधिक अनुवाद हुए। इनकी तुलना में कन्नड़, तमिल या मलयालम के बीच या तेलुगू और तमिल या मलयालम के बीच कम अनुवाद हुए। पश्चिमी क्षेत्र में मराठी और गुजराती के बीच जो अनुवाद हुआ, वह लगभग समान है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि भारतीय भाषाओं में सर्वाधिक अनुवाद हिंदी में हुए। डॉ॰ प्रभाकर माचवे के कथनानुसार, 'अनुवाद के क्षेत्र में हिंदी 'क्लियरिंग हाउस' का काम करती रही है। एक भाषा की कृति का अनुवाद बहुधा पहले हिंदी में होता है और बाद में हिंदी के माध्यम से अन्य भारतीय भाषाओं में पहुँचता है। यदि मूल कृतियों के अनुवाद की बात करें तो हिंदी में और अन्य भाषाओं में सर्वाधिक अनुवाद बंगला भाषा से हुए हैं। इस क्रम में दूसरा स्थान मराठी का

है। आज भी इन्हीं दो भाषाओं से सर्वाधिक अनुवाद हिंदी तथा अन्य भाषाओं में खूब अनुवाद हुए हैं।[7]

इस प्रकार अँग्रेजी से हिंदी और भारतीय भाषाओं के परस्पर अनुवाद से हिंदी और भारतीय भाषाओं का विकास होगा। इस विकास से हिंदी भाषिक भूमंडलीकरण काएक अंग बन जाता है, जो इसके प्रसार और अनुरक्षण में सहायक होगी। किंतु एक बहुत बड़ी चुनौती है, जो हिंदी एवं भारतीय भाषाओं को अँग्रेजी के मुकाबले खड़ा करने में सक्षम और समर्थ बनाने में सहायक होगी। हिंदी का विकास तभी होगा जब इसका प्रयोग विभिन्न संदर्भों, प्रयोजनों, कार्य क्षेत्रों, स्थितियों में होगा और इसमें यदि सूचना प्रौद्योगिकी और कंप्यूटर की सहायता ही अधिक सार्थक भूमिका निभाएँगी आज के भूमंडलीकरण के युग में हिंदी की स्थिति में जो विकास हो रहा है। उसमें अनुवाद की विशिष्टि भूमिका है। इस संबंध में अनुवाद के सामने कई चुनौतियाँ और संभावनाएँ मिलती हैं कि विश्वास के इस विपुल साहित्य का अनुवाद कैसे किया जाए ताकि भारतीय भाषाओं के महत्त्व में वृद्धि हो सके और वे भाषिक भूमंडलीकरण की भाषा के रूप में अपना स्थान बना सके।

पश्चिम में साहित्य अनुवाद का प्रारंभ बाइबिल के अनुवाद से हुआ। बाइबिल का 'प्राचीन विधान' (ओल्ड टेस्टामेंट) हिब्रू में लिखा गया था। मिस्र तथा एलेक्जैंड्रिया में बहुत-से ऐसे यहूदी थे, जिनकी मातृभाषा यूनानी थी और वे 'हिब्रू' भाषा नहीं जानते थे। इसलिए इन यहूदियों के लिए तीसरी-दूसरी शताब्दी में 'यूनानी' (ग्रीक) भाषा में इसके कई अनुवाद किए गए थे। इनमें सर्वप्रथम अनुवाद 'सेप्तुआगिंत' है, जिसका प्रणयन उन यहूदियों के लिए किया गया था। जो ग्रीक भाषा के आगे अपनी मातृभाषा भूलते जा रहे थे। इस अनुवाद का लक्ष्य धार्मिक अधिक, साहित्यिक कम था। कहा जाता है कि इसका अनुवाद बहत्तर अनुवादकों ने बहत्तर दिनों में किया था। यह शाब्दिक अनुवाद है, इसलिए इस अनुवाद की शैली ने बाइबिल के परवर्ती अनुवादों को काफी प्रभावित किया।

पश्चिम में साहित्य अनुवाद का प्रारंभ यूनानियों के बाद रोम का आता है, धार्मिक ग्रंथों के अनुवाद के साथ-साथ लौकिक साहित्य का अनुवाद भी रोम में मिलता है। यूनान पर रोम की विजय के पश्चात् रोमवासियों में कला, संस्कृति और ज्ञान के क्षेत्र में यूनानियों जैसा महान बनने की कामना पैदा हुई। उन्होंने यूनानी (ग्रीक) भाषा की श्रेष्ठ कृतियों का लैटिन में अनुवाद शुरू कर दिया। तभी से लैटिन में अनुवादों की एक अटूट शृंखला बन जाने की आशा जाग्रत हो उठी। रोम में ई॰पू॰ तीसरी शताब्दी में लिवियस ऐंड्रोनिकस ने होमर कृत 'ओडिसी' (ओडिसी) का एक पद्यात्मक, किंतु अनगढ़ अनुवाद लैटिन छंदों में किया था। कई यूनानी नाटकों के लैटिन अनुवाद हुए। प्रथम शताब्दी ई॰पू॰ सिसरो ने प्लेटो के 'प्रोतागोत्स' तथा अन्य कई यूनानी कृतियों का लैटिन भाषा में अनुवाद किया। पश्चिमी यूरोप में लैटिन लोकभाषा बन गई। बीड ने 'इक्लेजिएस्टिकल हिस्ट्री' (731ई॰) की रचना लैटिन में ही की थी। महान शिक्षाविद् सम्राट आल्फ्रेड (848-99ई॰) ने उस ग्रंथ का 'ऐंग्लो-सेक्सन' भाषा में रूपांतर प्रस्तुत किया। 9वीं शताब्दी के और उसके बाद के विद्वानों ने अरस्तू की दार्शनिक कृतियों के प्रामाणिक रूपांतर को लैटिन में पुनः भाषांतरित किया, जो 1150 ई॰ के लगभग दक्षिण स्पेयन से होता हुआ पश्चिम यूरोप पहुँचा। यह मानव-सभ्यता के सांस्कृतिक विकास में अनुवादक के योगदान का सर्वोत्तम प्रतीक है। 12वीं शताब्दी तक प्राचीन यूनानी ग्रंथों के लैटिन अनुवाद और प्रचार-प्रसार का मुख्य केंद्र स्पेन का टोलेड्रो स्थापित हो चुका था।

जर्मन अनुवादकों का कार्य सुव्यवस्थित और श्रेष्ठ कर था। मार्टिन लूथर द्वारा किए गए बाइबिल के अनुवाद (1522-34) से जर्मन भाषा को नवजीवन ही नहीं मिला, बल्कि उसके परवर्ती अनुवादकों को सहज और अकृत्रिम लेखन के लिए एक मानक अनुवाद मिल गया और

अनुवाद एक सर्जनात्मक विधा के रूप में मान्य हो गया। इसका सुंदर परिणाम यह हुआ कि 'क्रिस्टोफ मार्टिन तीलांद (1733-1813) से राइनर मेरिय रिल्के (1875-1926) तक सभी श्रेष्ठ कवियों ने इस कला की साधना की। जगेगेल द्वारा शेक्सपियर के नाटकों के जर्मन अनुवाद (1797-1810) विश्व साहित्य के श्रेष्ठ अनुवादों की प्रथम श्रेणी में शामिल है।'[8]

9वीं शताब्दी में फ्रांसीसी भाषा में दो सबसे प्राचीन पांडुलिपियाँ उपलब्ध हैं। एकबायोथिस के संबंध में एक गीत का अनुवाद और दो वाल्डेनसेस की कविता। दक्षिणी फ्रांस में पुरोहित लोग (फादर्स) बाइबिल संबंधी काव्य और पवित्र धर्म ग्रंथों के काव्यात्मक और कथात्मक भाग के अनुवाद में संलग्न रहते थे। सेम्युल की पुस्तक तथा राजाओं की पुस्तकों का अनुवाद 11वीं शताब्दी में मिलता है। फ्रांस में सबसे उल्लेखनीय अनुवादक लकीत द लीले (1818-94)ने यूनानी और लैटिन रचनाओं का सफल अनुवाद किया। यह सही है कि स्वच्छंदतावादी आंदोलन के विरोधियों पर उनका विशेष प्रभाव था, किंतु उनकी सबसे बड़ी विशेषता इस बात से स्पष्ट होती है कि उन्होंने 'इलियाड' और 'ओडिसी' का जो अनुवाद किया, उसको पुनः स्पेनी भाषा में रूपांतरित किया गया है।

अमरिकी अनुवादक भी अनुवाद कला की बारीकियों और उसकी महत्ता के प्रति अत्यंत जागरूक हैं। उन्होंने अलग-अलग युगों में हुए अनुवादों का एक भव्य संग्रह प्रकाशित किया है, जो विश्व-साहित्य में एक विशिष्ट प्रयोग है। डब्ल्यू॰एच॰ ऑडेन द्वारा संपादित 'द पोर्टेबल ग्रीकरीडर' इस प्रयोग की एक नव्यतम अभिव्यक्ति मानी जाती है। कुछ क्लासिक कृतियों के अनुवाद अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। प्लेटो के ग्रीक भाषा में लिखित शरिपब्लिकश का जो अँग्रेजी अनुवाद सन् 1871 में बैजामिन जोवित ने किया था, उसका पुनः प्रकाशन सन् 2004 में न्यूयार्क में हुआ। लिओ ताल्स्ताय के रूसी उपन्यास 'वॉर एंड पीस' विश्वर में काफी लोकप्रिय रहा है और इसके कई अनुवाद हुए। इसका रेजमेरी एडमंड्स द्वारा किया गया प्रथम अँग्रेजी अनुवाद लंदन में सन् 1957 में प्रकाशित हुआ था। इसके बाद अमेरिका में एन्न दुन्निगम (1968), कॉस्टेस गार्नेर (2000), एंथोनी ब्रिग्स (2006) ने अलग-अलग अनुवाद किए। लिओ ताल्स्ताय की कहानियों के संकलन का अँग्रेजी अनुवाद 'दि डेथ ऑफ इवॉन इलिच एंड अदर स्टोरीज के नाम से कॉस्टेंस गार्नेर, हाजी मुराद और ऐलिमरे मॉउ ने सन् 1915 में किया था, जिसका संपादित रूप 2004 में प्रकाशित हुआ। इनके अतिरिक्तक जापानी हाइकू के महान कवि बाशो की 50 हाइकू कविताओं का अँग्रेजी अनुवाद 'डि कोर्मन' (1984) ने किया। योएल हाफमौन (1986) ने जापानी कवियों की मृत्यु संबंधी कविताओं का और अनुवाद 'जापानीज डेथ पोइम्स' के नाम से प्रकाशित किया। राबर्ट हास (1994) ने जापानी के सुविख्यात हाइकू कवियों बाशो, बुसोन और इस्सा की विभिन्न हाइकू कविताओं का अँग्रेजी अनुवाद किया। वास्तव में अनुवाद के क्षेत्र में अँग्रेजी में कुछ असाधारण उपलब्धियाँ ऐसी हैं, जिन्हें विश्व वाङ्मय की अमूल्य निधि कहा जा सकता है। इसमें स्कॉटलैंड के कवि गॉबिन डगलास द्वारा वर्जिल के महाकाव्य 'इनीद' का अनुवाद (1553) आर्थर गोल्डिंग (1565-67) का अनुवाद है।

पश्चिम में भारतीय साहित्य प्रेरक का कार्य करता रहा है। अतः भारतीय साहित्य के अनुवादों का जो गौरव प्राप्त हुआ, उसका ही एक प्रमाण मैक्समूलर द्वारा संपादित और अनेक भाषाविदों द्वारा अनूदित 50 खंडों का 'द सेक्रेड बुक्स ऑफ द ईस्ट' है। प्राच्य धर्मग्रंथों के अनुवादकों में जेम्स डार्मेस्टीर, एल॰एच॰ मिल्स, रीज डेविड्स, जुलिएस, मैक्समूलर, जूलिएन जौली, एम॰ब्लूमफील्ड, ई॰बी॰ कॉविल, काशीनाथ त्र्यंबक तैलंग आदि नाम उल्लेखनीय हैं। भारत के मुगल सम्राट शाहजहाँ के ज्येष्ठ पुत्र शहजादा दाराशिकोह ने उपनिषदों का जो अनुवाद फारसी में किया था, उसका अनुवाद एक

 ISSN 0975-735X

फ्रांसीसी वैज्ञानिक अन्क्वेतिल टू पोरों (1801-02) ने लैटिन भाषा में किया। रूस, जर्मनी, जापान आदि देशों में अनुवाद की अनेक सक्रिय संस्थाएँ हैं। इसी प्रकार वाल्मीकि रामायण के सहस्त्रों रूपांतर भारतीय संस्कृति को विश्व की भिन्न-भिन्न संस्कृतियों से अनुस्यूत कर रहे हैं।

इस प्रकार बीसवीं शताब्दी में पाश्चात्य अनुवाद साहित्य का अभूतपूर्व विकास हुआ है। साहित्य, दर्शन, विज्ञान, समाजशास्त्र आदि सभी विषयों में अनुवाद कार्य हो रहे हैं। आज के युग में अनुवाद साहित्य बहुत ही बहुआयामी और व्यापक हो गया है। यूरोप, अमेरिका, जापान, चीन, रूस आदि विभिन्न देशों के आचार्य अनुवादक अपने-अपने विश्वविद्यालयों में प्राचीन ग्रंथों की शोधपरक टिप्पणियाँ ही नहीं प्रस्तुत करते, बल्कि विश्व के विशाल साहित्य को अपनी-अपनी भाषाओं में विशेषकर अँग्रेजी, रूसी और जापानी में रूपांतरित कर रहे हैं। रूसी भाषा में भी अनेक कृतियों के अनुवाद हुए। महाभारत के प्रथम रूसी अनुवादक एन॰ बर्ग हैं। ए॰ए॰ पेत्रोव ने 'भगवदगीता' का अनुवाद सन् 1787 में किया। ए॰एम॰ गोर्की के नेतृत्व में सन् 1981 में सोवियत संघ में प्राच्य साहित्य, विशेषकर भारतीय साहित्य के अनुवाद की परंपरा प्रारंभ हुई। प्रेमचंद के 'गोदान' और 'रंगभूमि', यशपाल का 'झूठा-सच' और 'दिव्या', अमृतलाल नागर के 'बूँद और समुद्र' तथा 'अमृत और विष', रांगेय राघव के 'मुर्दों का टीला' और 'कब तक पुकारूँ', फणीश्वरनाथ रेणु के 'मैला आँचल' आदि उपन्यास रूसी भाषा में अनूदित हुए। चेक भाषा में ओदोलेन स्मैकल ने प्रेमचंद के 'गोदान' का अनुवाद 1957 में किया। भारत के लिए महत्त्वपूर्ण अनुवादों में रवींद्रनाथ कृत 'गीतांजलि' और यूनेस्को द्वारा प्रकाशित प्रेमचंद कृत 'गोदान' है। रूसी में प्रेमचंद और तुलसीदास के अनेक अनुवाद हुए।

डॉ॰ ब्रजबल्लभ मिश्र के शब्दों में समझें तो मूल ग्रंथ के शब्दों की आत्मा को साकार करने की शक्ति किसी भी अनूदित भाषा में नहीं होती जब तक अनुवादक को उन शब्दों का सही अर्थ ज्ञात न हो इसके अभाव में अनुवादक मूल ग्रंथ की बारीकियों को भी नहीं समझ सकता लेकिन फिर भी अनुवाद अपने प्रवाह को बहाए चला जा रहा है। विश्व में आज अँग्रेजी का विशेषकर अमेरिकी अँग्रेजी का बोलबाला है। वास्तव में प्रवाहमान पाश्चात्य अनुवाद परंपरा को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि देश और काल के अनुसार अनुवाद संबंधी सैद्धांतिक विचारधाराओं में परिवर्तन होता रहा है।

भूमंडलीकरण के युग में अनुवाद अब साहित्यिक अनुवाद से कहीं आगे बढ़ गया है। आज बाजार के निशाने पर हर देश का उपभोक्ता समाज है जो अपनी निज भाषा के प्रति भी सजग हो रहा है। ऐसे में बाजार का उद्देश्य मात्र उपभोक्ताओं को लुभाना है। उपभोक्ता तक अपनी पहुँच को सुनिश्चित करना उनकी चेतना में गहरे पैठकर उनकी संवेदनाओं को स्पर्श करना बाजार या कंपनियों के लिए तभी संभव है जब समूचे विज्ञापनों का अनुवाद उपभोक्ता की अपनी भाषा में हो। अत: भूमंडलीकरण की माँग के अनुरूप विज्ञापनों का अनुवाद एक चुनौती है जिसका सामना करने के लिए अनुवाद को सृजनात्मक तौर पर अधिक परिपक्व और विश्वसनीय होना होगा।

**संदर्भ**


1. रमाप्रसन्न नायक, प्रयोजनमूलक हिंदी, पृ॰ 24
2. संपा॰ नगेंद्र, रवींद्रनाथ श्रीवास्तव, प्रयोजन मूलक हिंदी, पृ॰ 69
3. संपा॰ रवींद्रनाथ श्रीवास्तव, मोटूरि सत्यनारायण, प्रयोजनमूलक हिंदी, पृ॰ 21
4. कृष्ण कुमार गोस्वामी, अनुवाद विज्ञान की भूमिका, पृ॰ 445
5. वही, पृ॰ 445 6. वही, पृ॰ 453 7. वही, पृ॰ 453
8. संपा॰ नगेंद्र, अनुवाद विज्ञान सिद्धांत और अनुप्रयोग, 1993, पृ॰ 31